शोध मंथन Vol. XV No.II Apr.-June 2024 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

महाकवि भास के नाटको मे व्यक्तिपरक मूल्य

प्राप्तिः 06.06.2024
स्वीकृतः 27.06.2024

46

डॉ० अनीता व्यागी
निर्देशिक, रि०– एसोसिएट
प्रो० आवन्ती वाई लोधी महाविद्यालय
बरेली उ०प्र०

सर्वेश कुमार
शोधार्थी, संस्कृत विभाग
बरेली कालेज, बरेली
ज्यों० फुले० रू० ख० विश्वविद्यालय बरेली उ०प्र०
ईमेलः *sinashvarma 824 @gmail-com*

सारांश

प्रगति के मार्ग की ओर निरन्तर अग्रसर होना प्रत्येक व्यक्ति का आदिम स्वभाव है। प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत आचरण, स्वभाव, सदाचार, योग्यता आदि के द्वारा समाजम में प्रसिद्धि प्राप्त करता है, व्यक्तिगत के द्वारा ही वह अपने आपको एवं अपने समाज तथा राष्ट्र को एक पहचान दिलाता है और वह पहचान जो सामाजिक विकास में सहायक हो व्यक्तिवादी मूल्यों के अन्तर्गत आती है।

अर्थात व्यक्ति अपने व्यक्तिगत विकास, आनन्द और श्रेय की प्राप्ति के लिए जिन मूल्यों का प्रयोग करता है वे मूल्य व्यक्तिवादी मूल्य कहलाते हैं। संस्कृत नाट्य परम्परा में अनेक कवि, विद्वान, ऋषि मुनि, व्याकरणाचार्य और मनीषी हुए इन्हीं में से एक महान कवि भास हुए। इन्होने अपने रूपकों में सामाजिक मूल्यों के रूप में एक मंजूशा प्रस्तुत की। महाकवि भास ने अपने नाटकों में सामाजिक समरसता एवं मानव मूल्य संरक्षण और संवर्धन के लिए अद्वितीय काव्य की रचना की जिसका मूल शिक्षा संस्कार, परोपकार, अतिथि सत्कार, नारी शिक्षा, समानता, नीति एवं लोक व्यवहार के ज्ञान के रूप में विश्व वन्धुत्व, देश प्रेम भावना, मातृ शक्ति, भातृ प्रेम एवं पारिवारिक सुख–शान्ति, विश्व

कल्याण एवं समानतापूर्वक एक दूसरे के प्रति सौहार्द की भावना को अपने रूपकों में सम्मिलित किया और इस समाज को ऐसे मूल्य देने का प्रयास किया जिससे समाज में व्याप्त संकुचित मानसिकता दूर हो सके। समाज में अच्छे मूल्यों का प्रवेश हो, बुरे मूल्यों का ह्रास हो। इस प्रकार समाज को ऊँचाई पर पहुँचाने के लिए काव्य एवं प्रकार का अच्छा माध्यम है इसलिए कवि ने मूल्यात्मक रूपकों को चुना और एक–एक रूपक में मूल्यों का समावेश किया। रूपकों में प्रत्येक पात्र मूल्यवान है।

कर्णधारम् में कवि भास ने संसार में दांन के महत्व को कर्ण के माध्यम से सुन्दर ढंग से चित्रण किया है।

कर्ण की भारतीय आदर्श और संस्कृति के प्रति अगाध श्रृद्धा है। वह राजपुरूष है। साथ ही

वीर योद्धा भी हैं। वह जानता है कि राजाओं का परम कर्तव्य प्रजा का सब प्रकार से पालन करना है। शरीर नश्वर है। यदि कुछ शाश्वत है तो वह व्यक्ति का यश, कीर्ति है परन्तु इसकी पुष्टि वचन मात्र से ही न करके क्रियात्मक रूप से भी करता है। संकटापन्न कर्ण ब्राहमण द्वारा मांगने परं अपने कवच और कुन्डल को सब कुछ जानते हुए भी कि इनके बिना कोई युद्ध कुछ नही कर सकता फिर भी दान में दे देता है। कर्ण समझते है कि दान एक शाश्वत वस्तु है। कर्ण मानता है कि सभी धन नष्ट हो जाते है पर दान कभी भी नष्ट नही होता है। शल्य के बार–बार समझाने पर कि यह कुन्डल और कवच तुम्हारे शरीर के रक्षा करने वाले हैं। इन्हें दान में न दो तो कर्ण शल्य से कहते है कि अब मुझे इनको देने से मत रोको क्योंकि

शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्।
सुबद्धमूला निपतन्ति पादपाः।
जलं जलस्थानगतं च शुयति
हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति।।

कर्ण कहते हैं, समय बीतने पर उपार्जित विद्या भी नष्ट हो जाती हैं। मजबूत जड़ वृक्ष गिर पड़ते हैं, जल भी सरोवर में जाकर (गर्मी आने पर) सूख जाता है। किन्तु जो हवनादि किया हुआ पदार्थ या दान में दिया हुआ है वह ज्यों का त्यों बना रहता है, अर्थात पुण्य का नाश नहीं होता।

इस प्रकार महाकवि भास ने दान की महत्वा का वर्णन किया है। कर्ण ने धर्म की महत्ता कर्णभारम् नाटकम् में अपने कथनानुसार सभी के लिए एक आदर्श रूप प्रस्तुत किया है। ब्राह्मण को कर्ण के द्वारा नमस्कार करने पर, ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा यश सागर के समान विस्तृत और पर्वत के समान महान हो। ऐसा कहने पर कर्ण ने ब्राह्मण से कहा कि आपने दीर्घायु हो ऐसा क्यों नहीं कहा या यही अति सुंदर हमारे लिए है–

क्योकि –

धर्मो हि यत्नैः पुरुषेण साध्यो भुजङ्गजिह्वाचपला नृपश्रियः।
तस्मात्प्रजापालनमात्रबुद्धया हतेशु देहेशु गुणा धरन्ते।।

केवल धर्म ही मनुष्य के द्वारा यत्नपूर्वक साध्य है। राजलक्ष्मी तो सर्प की जिह्वा की भाँति चञ्चल है इसलिए प्रजा का पालन करने वाला अपने शरीर, पात के बाद केवल यश से ही जीवित रहता हैं। क्योंकि यश के द्वारा युगों–युगो तक मनुष्य को याद किया जाता है। और समाज में मूल्यों के रूप में विद्यमान हो जाता है।

कर्ण की ही भाति कवि भास ने अपने कवित्व में चारुदत्तम् में पात्र चारुदत्त के माध्यम से सामाजिको को मूल्ययुक्त सन्देश दिया। मूल्यवान चारुदत्त एक ऐसा पात्र है। जिसने अपनी सारी धन सम्पदा को लोगों के हितार्थ तथा याचकों के याचना पर दान कर दी। जब तक चारुदत्त के पास धन रहा उन्होंने किसी भी जरूरत मन्द को अपने द्वार से खाली हाथ नहीं लौटाया। उन्होंने यश तो कमाया पर स्वयं धर्म के यज्ञ में तपकर इतने गरीब हो गये कि उनके यहाँ कोई देखने भी नही आता।

उनकी धन सम्पदा न रहने से ऐसी दशा हो गयी कि वे स्वयं परेशान हैं पर वे धर्म के मार्ग से विचलित नही होते किसी के आगे हाथ फैलाने नहीं गये और यदि फिर भी कोई याची उनके द्वार पर आ जाता तो वे दरिद्र होते हुए भी उसे कुछ न कुछ देते जरूर है। दुख तो उन्हें इस बात का है कि धन के जाने पर अपने मित्र भी साथ छोड़ देते हैं।

सत्यं न में धनविनाशगता विचिन्ता
भाग्यक्रमेण हि धनानि पुनर्भवन्ति।
एतत्त मां दहति नष्ठधन श्रियो में
यत् सौहृदानि सुजने शिथिलीभवन्ति।।

मित्र! यह सत्ता है कि मुझे धन के नाश की विशेष चिन्ता नहीं है क्योंकि भाग्य के क्रम से धन पुनः हो जाते हैं। परन्तु यही तो मुझे विशेष कष्ट प्रतीत होता है। कि निर्धन होने पर मेरे वन्धुवर्ग हमारे जैसे सुजन व्यक्ति में भी निरादर की भावना रखते हैं। इन्ही सब बातो से चारुदत्त का मन बहुत खिन्न होता है।

इस प्रकार चारुदत के बहुत दुःखी होने पर चारुदत्त के मित्र विदूषक चारुदत्त को धैर्य धारण करने को कहता है। और समझाता है कि आपको अत्यन्त सन्ताप करना उचित नही है। पुरुष की युवावस्था की भाँति गृह का यौवन दशाविशेष को प्राप्त करता है। समुद्र पर्यन्त्र की संपत्ति को दान में विनिष्ट करने वाले आपकी यह दरिद्रावस्था कृष्ण पक्ष में क्षय हुई चन्द्रमा की कला की तरह रमणीय ही लगती है। मैं विनाश होने वाली संम्पदा की चिन्ता नहीं करता।

योग्यता आदि गुण एवं करुण्यादि रस के अनुभवी सहृदय पुरुष की विपत्ति मुझे असहाय प्रतीत होती है। क्योंकि–

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते?
यथान्धकारादिव दीपदर्शनम्।
सुखात्त यो याति दशा दरिद्रता
स्थितः शरीरेण मृतः स जीवति।

दुख की अनुभूति के बाद ही सुख अच्छा लगता है जैसे अन्धकार में दीप का प्रकाश रुचिकर प्रतीत होता है जो शुखमय से दुःख की दशा को प्राप्त होता है वह तो शरीर धारण करके भी मरे हुए की भाँति जीवन धारण करता है।

इसलिए हे मित्र धैर्य धारण कर समय का इन्तजार करिए क्योंकि समय परिवर्तन शील कभी आप उच्च्च वनिया थे आज आपका समय विपरीत है जोकि दरिद्रावस्था को प्राप्त हुए हो कभी फिर से आप 'महान' ब्राह्मण बनेंगे मित्र परेशान न हों। इसलिए सामाजिको को भी विपरीत समय में धीरे से काम लेना चाहिए।

सन्दर्भ

1. मिश्र, पं० रामजी. व्याख्याकार. कर्णभारम् महाकविभास. चौखंबा विद्याभवनः वाराणसी. श्लोक सं– 22. पृष्ठ **23.**
2. वही० श्लोक सं०–17. पृष्ट **18.**
3. गिरि, श्री कपिल देव. व्याख्याकार. चारुदत्तम् – महाकवि भास. चौखम्बा विभवनः वाराणसी. श्लोक–3. पेज पृष्ठ **12.**
4. वही० श्लोक सं०–5. पृष्ट **13.**
5. मिश्र, आचार्य जगदीशचन्द्र. व्याख्याकार. प्रतिमानाटकम् महाकवि भास. चौखंबा विद्याभवनः वाराणसी. श्लोक सं०– 19. पृष्ठ **46.**
6. सिंह, डॉ० सत्यव्रत. व्याख्याकार. साहित्य दर्पण आचार्य विश्वनाथ।
7. इन्टरनेट. विकिपीडिया आदि।